द्वितीय अध्याय

विवेच्य नाटकों का विषयगत विवेचन

"द्वितीय आध्याय"

: "विवेच्य नाटकों का विषयगत विवेचन" :

2.1 "सेतुबंध"

हिंदी साहित्य में सुरेंद्र वर्मा का 'सेतुबंध' नाटक के जरिए पहली बार एक नाटककार के रूप में आगमन हुआ । 'सेतुबंध' नाटक का पहली बार ई. स. 1972 में प्रकाशन हुआ । साठोत्तरी हिंदी नाटककारों में सुरेंद्र वर्मा एक प्रयोगशील नाटककार माने जाते हैं । अत: नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने 'सेतुबंध' में गुप्तकालीन समाज की स्थिति को ऐतिहासिकता की ओट में ढालकर दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया है । नाटककार अतीत की ओर जाकर भी आधुनिक जीवन संदर्भ से हमेशा जुडा रहता है । इसलिए यह नाटक वास्तव में आज के जीवन का जीता जागता चित्रण प्रस्तुत करता है । सुरेंद्र वर्मा का प्रस्तुत नाटक रामायण पर आधारित है । इस नाटक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि नाममात्र है । "श्री राम ने लंका पर आक्रमण के समय समुद्र पर जो पूल बंधवाया था उसका नाम । नल और निल ने अन्य बंदरों की साह्यता से श्रीराम की सेना को पार ले जाने के लिए यह पूल बनवाया था ।"[1] रामायण में प्रभु रामचंद्रजी ने बंदर सैनिकों की साहयता से लंका तक पहुँचने के लिए और रावण की कचोट में फँसी सीता को मुक्त करने के लिए सेतु बंधवाया था उसी, सेतु की सहायता से अपनी पत्नी सीता को प्राप्त किया था । प्रस्तुत नाटक में सेतु तो है लेकिन वह राम के सेतु की भाँति नहीं, बल्कि पति-पत्नी के पवित्र संबंधों को जोडने की अपेक्षा तोडनेवाला है ।

'सेतुबंध' नाटक गुप्तकालीन इतिहास से उपेक्षित प्रसंग को प्रसिद्ध कवि कालिदास और चंद्रगुप्त की पुत्री प्रभावती के रूप में समसामायिक जीवन की जटिल समस्याओं को प्राख्यापित करता है । चंद्रगुप्त की बेटी प्रभावती पर थोपे गये पति रूद्रसेन, राजनीतिक विवाह से संपन्न प्रभावती की विफलताएँ और परिणाम स्वरूप प्रभावती में निर्मित नारी-चेतना को यहाँ उजागर करने का प्रयास किया है ।

नाटक के प्रारंभ में ही विभावती और प्रवरसेन अपने ही नगर के नाट्यागृह में नाटक देखने के लिए गये थे । उस नाटक में कुछ ऐसे संवाद प्रस्फुटित होते हैं जिनके कारण प्रवरसेन का मन नाटक देखते समय

---

1. *राणाप्रसाद शर्मा - पौराणिक कोश, पृष्ठ -537*

अस्थिर हो जाता है । इसलिए वह नाटक देखना छोडकर बीच में ही उठकर वापस अपने भवन चला आता है । नाटक की शुरआत से ही प्रवरसेन कुछ चिंतित नजर आ रहा था । विभावती की नजर से यह बात छुप नहीं रही थी । नाटक देखने के लिए प्रवरसेन का मन राजी नहीं था लेकिन विभावती के अनेक बार किए गए अनुरोध के कारण अपने मन के विरुद्ध नाटक देखने के लिए प्रवरसेन अनिच्छा से आता है । विभावती की नजर नाटक के आरंभ से ही उसपर थी । नाटक के संवाद, दृश्यों को देखकर उसके अस्थिर मन का आंदोलन स्पष्ट दिखायी देता था । विभावती के कथन से यह बात स्पष्ट होती है । जैसे - "जब ये परदा उठा था, मैं लक्ष्य कर रही थी कि आर्यपूत्र कुछ ... अस्थिर हैं । जैसे जैसे नाटक बढता गया, उनकी बेचैनी भी बढती गयी ... और ज्यों ही उस पात्र ने वह संवाद बोला कि ... वह केवल एक उपादान था, केवल माध्यम था ... आर्यपुत्र अचानक उठे और बाहर चले गये ।"[1] विभावती को नाटक छोडकर बाहर चले आने की चिंता बहुत सता रही थी । उसके पहले भी प्रवरसेन के व्यवहार में आये बदलाव को वह देख, परख रही थी, महसूस कर रही थी कि प्रवरसेन का दिन भर उलझा उलझा रहना, खाने पर मन न लगना दो कौर खाते ही पूरा भोजन छोडकर उठ जाना, रात-रात भर जागना, करवटों के सहारे सारी रात बिता देना, घंटों पहले कही गयी बातों को भूलना, हँसने में विचित्रता, नैराश्य, क्रोध और चिंता की छाया को देख कर विभावती का भी चिंताग्रस्त होना स्वाभाविक ही था । विवशता के कारण इन सब का कारण वो प्रवरसेन से पूछती है, - "लेकिन क्यों ? ... प्रजा सुखी है । सेना स्वामिभक्त है । कोष भरापूरा है । सीमाओं पर शांती है । ..."[2] इन सब बातों के अलावा चिंता का कारण क्या हो सकता है, इस का उसे पता नहीं चल रहा था । तब प्रवरसेन अपनी उलझन को विभावती के सामने स्पष्ट करते हुए कहता है, -

"प्रवरसेन : सप्ताह-भर पहले मुख्य शिल्पी मेरे पास और मंदिर की रूपरेखा तथा मानचित्र माँगने लगे । यह सब सामग्री माँ के पास थी । मैंने सोचा की उन्हें तो रामगिरि से आने में अभी छह-सात दिन और लगेंगे । तब तक काम क्यों रूका रहे । इस विचार से मैं उनके कक्ष में गया और सामग्री खोजने लगा । उनके शयनगृह में एक काष्ठपेटिका में ... एक रत्नमंजूषा भी थी । कौतूहलवश उसे खोला तो ...

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ -19*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ -20*

विभावती : (आशंका से) क्या था उसमें ? (विभावती प्रवरसेन की ओर देखती है । फिर चौकी तक जाती है । रेशमी अच्छादन खोलती है । ग्रंथ निकालती है । उसे उठाकर देखती है ।)
यह तो मेघदूत की प्रति है ... बहुत पुरानी ...

प्रवरसेन : प्रति नहीं, पाण्डुलिपि ।

विभावती : लेकिन मेरे शिक्षक अगर कवि भी होते, तो निसंदेह अपनी रचना की प्रति भेज सकते थे ।

प्रवरसेन : प्रति ? या पाण्डुलिपि ? ... और तुम उसे परिवार में किसी को नहीं दिखाती ? कभी उसकी चर्चा तक नहीं करतीं ? सबकी आँखों से बचाकर अपने शयनकक्ष में रख लेतीं ? रत्नमंजूषा में छिपाकर ? ... "[1]

मेघदूत की पाण्डुलिपि देखकर अपनी माँ प्रभावती और कवि कालिदास के विवाह-पूर्व प्रेमसंबंध थे ऐसा विचार प्रवरसेन के मन में उभर आता है । इसलिए प्रवरसेन के चेहरे से उलझन और चिंता की लकीर स्पष्ट दिखायी देती थी ।

यह बात बिल्कुल सच थी कि कालिदास विलक्षण प्रतिभा के कवि थे । और वे प्रभावती के भूतपूर्व शिक्षक भी थे । वे अत्यंत आकर्षक व्यक्तित्व के कवि थे परिणामत: प्रभावती मन-ही-मन उनकी ओर आकर्षित होती है । कालिदास जैसे प्रतिभावान और भूवनमोहन कवि की प्रेयसी बनने में वह अपनी जीवन की कृतार्थता मानती है । वह कालिदास के साथ विवाह करके उसे अपना जीवनसाथी बनाना चाहती है । परंतु यहाँ भाग्य उसका साथ नहीं देता । राजकीय स्वार्थ के लिए प्रभावती के प्यार की यहाँ बलि चढाई जाती है । सम्राट होने की इच्छा के कारण चंद्रगुप्त अपनी पुत्री प्रभावती का विवाह वाकटक नरेश रूद्रसेन से करवा देता है । प्रभावती विवाह पूर्व-प्रेम की असफलता के कारण मनोरूग्ण बन जाती है । चंद्रगुप्त की हटिली भूमिका और धमकी के आगे प्रभावती झुक जाती है और वह अनिच्छा से रूद्रसेन से विवाह करती

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 21/22*

है । कालिदास के प्रेम के लिए व्याकुल प्रभावती हिरनी की भाँति अपने पिता चंद्रगुप्त पर उछल पडती है । उसकी असंतुष्टता विद्रोह में परिवर्तित होती है और वह अपने पिता की प्रवंचना करते हुए कहती है - "ब्याह के वेदी पर मेरा बलिदान और नीचे सुनहरे अक्षरों में उपाधि - प्रभावती - दमनकर्ता ... ।" अत: वह अपने विवाह को राजनीतिक विवाह मानती है । उसका कहना है कि ऐसे विवाह में भावनाओं का सम्बन्ध नहीं होता । वो वाकृटक नरेश की पत्नी धर्म और तन से बन जाती है , लेकिन मन से नहीं । इसी बात के संकेत प्रवरसेन को अपनी पत्नी के साथ नाटक देखते समय मिल गये थे । इसलिए वह बीच में ही उठकर बाहर चला आया था । उसे इस नाटक के संवादों में अपने जीवन का अंशिक प्रतिबिम्ब देखने को मिलता है । तब वह अपनी माँ की अनुपस्थिति में शयनकक्ष में जाकर एक काष्ठपेटिका में लिपटी हुई मेघदूत की पाण्डुलिपि देखता है । उसका मन माँ और उसके विवाह पूर्व-प्रेमी कालिदास के प्यार के बारे में आशंकित हो उठता है ।

इन बातों के कारण प्रवरसेन में मानसिक अंतर्द्वन्द्व मचल उठा था । वह अपनी माँ के विवाह पूर्व प्रेम संबंधों से परिचित होकर अपने - आपको एक हीन ग्रंथी से त्रस्त कर बैठा था । उसके मन में अपने पिता के अस्तीत्व के प्रति संदेह निर्माण होता है । अत: वह अपनी माँ के संदर्भ में एक प्रेमिका का मनोविश्लेषण स्पष्ट करते हुए कहता है, - "कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जिनके बाहरी रूप से मालूम नहीं पडता कि उनके अंदर कैसा रक्तपात है । संसारिक धरातल पर से सब कुछ उसी ढंग से करते है, जैसे एक औसत आदमी करता है, लेकिन भीतर ही भीतर वे एक समानांतर जीवन जीते हैं ।"[1] इससे वह अंदाजा लगाता है कि कालिदास की मृत्यु के पश्चात माँ का अत्यंतिक विचलित हो जाना, रामगिरीपर जाकर रहना, वहा शांति पाना आदि से कालिदास से माँ के संबंध आत्यंतिक दृढ होंगे । इससे, उसके मन में हीन ग्रंथी का निर्माण ओर भी बढने लगता है । उन्होंने जान लिया है कि माँ का वैवाहिक जीवन सुखी नहीं था । वो यह भी अंदाजा लगाता है कि शायद पिताजी माँ के लिए अनुकूल नहीं होंगे । इसके बाद उसकी विचार श्रृंखला बल पकडने लग ती है और तर्क- वितर्क की जाल उसके मन में अंतर्द्वन्द्व पैदा करता है । वह सोचता है कि ब्याह के बाद माँ कभी उज्जयिनी नहीं गयी होगी, अश्वमेघ यज्ञ के अवसर पर माँ ने अमोद-प्रमोद की बातें नहीं सोची होंगी, महारानी कुबेरनागा की रोगग्रस्थ स्थिति में माँ ने दु:ख प्रकट नहीं किया होगा । इससे

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 23*

उनका अंतर्द्वन्द्व और भी बढने लगता है । माँ का कभी उज्जयिनी न जाना, कालिदास का कभी नंदिवर्धन न आना-पिताजी के देहांत के पश्चात के समय, सेतुबंध मंथन के समय, मेरे राज्याभिषेक के समय, मेरे विवाह के समय, नयी राजधानी बसाते समय महाकवि कालिदास का न आना इन सभी घटनाओं से उसके मन की आशंका बढने लगती है । और इस के कारण उसकी मानसिक अवस्था डावाडौल होने लगती है ।

कालिदास द्वारा अपनी माँ के मेघदूत की पाण्डुलिपि देना, पाण्डुलिपि को माँ के द्वारा अपने शयन-कक्ष की काष्ठपेटिका और रत्नमंजूषा में रखना, यह पाण्डुलिपि परिवार के किसी भी सदस्य को न दिखाना । इन सभी घटनाओं के कारण प्रवरसेन अधिक आकुल होता है । उसकी मानसिकता रूग्ण बनने लगती है । प्रवरसेन को जब पता चलता है कि अपनी माँ प्रभावती के प्रेमसंबंध कालिदास से जुडे हुए थे, तब उसे अपने अस्तित्व के प्रति शंका उत्पन्न होती है । उस वक्त हीनता और क्रोध के कारण वह अपनी माँ से इस बात का स्पष्टीकरण माँगता है । तब प्रभावती अपने बेटे को विवाह पूर्व प्रेम के पूरे राज के साथ उठाये हुए दुःखों एवं कष्टों को उसके सामने स्पष्ट करती है । - "सालों पहले त्रयोदशी का वह दिन ... मैंने व्रत रखा था, फूल चुने थे, अबीर का तिलक लगाया था, ओर लाक्षारस से भोजपत्र पर अपने मनभाये वर का चित्र बनाकर ... पुष्पधन्वा को समर्पित कर दिया था । ... पूरा दिन कैसे कटा था ... पुलक से भरा, उमंगों में डूबा ... (निःशब्द दासी का प्रवेश ।) दासी : विदर्भ राज्य के वाकाटक नरेश पृथ्वीसेन के पास संदेश भेजा जा रहा है कि वे अपने युवराज रूद्रसेन के लिए आप के ब्याह का प्रस्ताव स्वीकार कर लें ।"[1] यह सब सुनने के बाद प्रवरसेन प्रभावती के बारे में क्रोध व्यक्त करता है । उसे लगता है कि प्रवरसेन कालिदास की प्रेमिका का पुत्र है । वह समझता है कि अपने पिता से निर्मित न होकर मैं कालिदास से उत्पन्न हो गया हूँ । माँ की शादी जबरदस्ती रूद्रसेन से होने और बिना भावना के योगदान से प्रवरसेन के उत्पन्न हो जाने से खुद के अस्तित्व के बारे में प्रवरसेन उसका मन ग्लानि और पीडा से भर जाता है । उसके मन में हीनता की ग्रंथि पैदा होने लगती है । इस ग्लानि और पीडा के साथ प्रवरसेन अपनी माँ प्रभावती से पूछता है - "तो मुझे देखकर तुम्हें घृणा नहीं होती ? भावना के बिना शारीरिक संभोग जैसे बलात्कार होता है, और मैं उसी का तो परिणाम हूँ .. ?"[2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ -31*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ -35*

इन बातों के साथ-साथ प्रवरसेन के मन में अपने साहित्य के बारे में भी शंका उत्पन्न होती हैं । उसे लगता है कि मेरा महाकाव्य 'सेतुबंध' वास्तव में प्रशंसनीय रचना नहीं, मैं कालिदास की प्रेमिका का पुत्र होने के कारण शायद इस रचना को ऊँचा माना गया होगा । शासन मेरी मुठ्ठी में होने के कारण और सारे साहित्यिक मेरे आश्रित होने के कारण यह रचना श्रेष्ठ ठहरायी होगी । इन सभी के कारण प्रवरसेन में टूटन आने लगती है । उसके मन का बिखराव होने लगता है । कालिदास द्वारा दिये गये विशेषण उसे आरोप जैसे महसूस होने लगते हैं । प्रवरसेन के मन की भग्नावस्था टूटन इस कथन द्वारा स्पष्ट होती है, - " ... तब फिर मैंने क्या पाया ? मेरी व्यक्तिगत् उपलब्धि क्या है ? ... अगर कालिदास की स्वीकृति भी सच्ची नहीं है, तब फिर मैं भी अपने पिता की तरह एक औसत् व्यक्ति हूँ... अधिकतर सेतुओं के समान मेरा सेतु भी आधा था चौताई या तिहाई है - कीचड़ और काई - सना ... धुन और जंग लगा ... भग्न ... जर्जर ... कंकालवत ... ।"[1] अत: राम ने सेतु की साहयता से अपनी पत्नी सीता को पा लिया था, परंतु इस नाटक में सेतु तो है पर वह पति-पत्नी के संबंधों को जोडने की अपेक्षा उन संबंधों को और भी गहरा बनाकर तोड देता है ।

'सेतुबंध' नाटक की उपर्युक्त कथावस्तु के बारे में डॉ. चंद्रशेखर का मत है - "प्रभावती की खोज उस बिंदू पर सर्वथा आधुनिक हो जाती है जहाँ वह अपने ही पुत्र के समक्ष न केवल अपना आत्मवरण ही स्वीकार करती है, प्रत्युत उसी प्रतिक्रियाओं पर प्रश्न करती है । फिर भी उसकी तमाम सप्रश्नता पूरे विद्रोह में नियति को स्वीकारने का समझौता नहीं है । वह परास्त नहीं होती परंतु उसकी सप्रश्नता तब केवल विश्राम-सा पाने लगती है जब वह स्वयं को खण्डित सेतुबंध मान लेती है ।"[1] प्रस्तुत नाटक के संदर्भ में जयदेव तनेजा के विचार स्पष्ट हैं - "कुलमिलाकर यह नाटक एक ऐसी विवशनारी की कहानी है, जो माँ तो बनती हैं, परंतु विवाह के बावजूद पत्नी नहीं बन पाती ।"[2]

निष्कर्ष

'सेतुबंध'के संदर्भ में कहा जा सकता हैं कि इस नाटक की कथावस्तु एक ही अंक में एक ही दृश्यबंध पर संपन्न होती है । नाटक में कुल दस पात्र हैं, उसमें पुरुष पात्र छह एवं स्त्री पात्र तीन हैं तथा अन्य

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 38*
2. *डॉ. चंद्रशेखर - समकालीन हिंदी नाटक : कथ्यचेतना, पृष्ठ -294*
3. *जयदेव तनेजा - आज के हिंदी रंग नाटक, पृष्ठ -135*

नागरिकों के भूमिका में दो हैं । प्रस्तुत नाटक नायिका प्रधान है । नायिका के रूप में प्रभावती है । इनके आलावा प्रमुख पात्र के चंद्रगुप्त, प्रवरसेन, विभावती, कालिदास, सेनापति, दासी-दौवारिका आदि पात्र अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका आदा कर रहे हैं ।

नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में मिथकीय प्रसंगों की अपेक्षा आधुनिक जीवन में स्थित पति-पत्नी के जीवन के अलगाव को, तनाव को चित्रित किया है । प्रभावती के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति की चेतना ऐसे दमन का प्रतिकार नहीं करती और अपराध बनकर घुटन का अनुभव करती है । प्रस्तुत नाटक में प्रभावती के चरित्र को प्रयोगशील बनाया है । इसके साथ ही साथ नाटककार ने प्रस्तुत नाटक के जरिए जातिवादी विचारों को तोडने का प्रयत्न किया है । प्रभावती ब्राह्मण जाति के प्रतिभाशाली कवि कालिदास को चाहती है । परंतु उसके पिता चंद्रगुप्त उसकी शादी वाकाटक नरेश क्षत्रिय राजा रूद्रसेन से कराकर उसके वैवाहिक जीवन पर घोर आघात करतें हैं । नाटककार नें यहाँ प्रभावती को चेतनशील में ढालकर परंपरागत स्त्री स्वातंत्र्य को नये संस्कारों में ढालने का प्रयत्न किया है । इसके माध्यम से नाटककार ने भारतीय नारी के प्रेम और श्रद्धा को व्याख्यायित करने का प्रयास किया है । निष्कर्षत: स्पष्ट है कि सुरेंद्र वर्मा का 'सेतुबंध' नाटक वास्तव में आज के जीवन का जीता-जागता चित्रण प्रस्तुत करता है ।

2.2 ''द्रौपदी''

प्रयोगधर्मी नाटककार सुरेंद्र वर्मा की 'द्रौपदी' द्वितीय नाट्यकृति है, जिसमें इतिहास और कल्पना का वैशिष्ट्यपूर्ण सम्मिश्रण है । 'द्रौपदी' नाटक पहली बार सन 1972 मं प्रकाशित हुआ है । प्रस्तुत नाटक दो अंको में विभाजित है । प्रस्तुत नाटक समकालीन जीवन में लगातार होनेवाले भौतिक और नैतिक प्रतिमानों का संघर्ष, दबाव और तनाव से घुटते व्यक्ति और परिवार, मूल्यों का विघटन, संबंधों का परिवर्तन, युवा-वर्ग की स्वच्छंदता और भटकन आदि का एक सार्थक दस्तावेज है । 'द्रौपदी' उस पौराणिक स्त्री का नाम है, जो महाभारत में पाँच पांडवों की या पाँच भाइयों की या पाँच व्यक्तियों की पत्नी रह चुकी है । ये पाँच पांडव पाँच व्यक्तियों के रूप में भिन्न-भिन्न स्वभाव के भिन्न भिन्न व्यक्ति रह चुके हैं । इन पाँच प्रकारों के स्वभाव विशेषोंवाले पाँच व्यक्तियों के साथ पतिपरायण पत्नी के रूप में अकेली द्रौपदी को जीवन यापन करना पडता है । यह महाभारत के द्रौपदी के जीवन की त्रासदी है । इसको

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

प्रकार की त्रासदी कुछ अलग ढंग से आज भी अस्तित्व में हैं । नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने 'द्रौपदी' नाक के द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है ।

वस्तुत: प्रस्तुत नाटक मनमोहन नामक एक व्यवसायिक कम्पनी के अफसर की कहानी है जो पति, पिता, प्रेमी, अफसर और मातहत के बीच बुरी तरह खण्डित होकर अपने आपसे ही जूझ रहा है । सुरेखा उसकी पत्नी है । सुरेखा नाटक के आरम्भ में ही अपने परिवार के सभी सदस्यों का परिचय दर्शकों से कराती है । परिचय कराते समय जब वह अपने एक मात्र पति मनमोहन अर्थात मनि का नाम लेती है तभी चार नकाबवाले पुरुष उसके सम्मुख आते हैं और सुरेखा से प्रश्न करते हैं कि, - "तो हमारी संज्ञा क्या होगी ?"[1] सुरेखा द्वारा परिचय पूछनेपर ये चारों अपने आपको मनमोहन अर्थात सुरेखा का पति बतलाते हैं, उस वक्त सुरेखा की मन:स्थिति लज्जाननक हो जाती है । वह क्रोधित होकर उनपर बरस पडती है । जैसे -

"सुरेखा : (क्रोधपूर्वक) इस तरह किसी के घर में घुस जाने का क्या तात्पर्य है ?
चारों : (शांती से) हम किसी के घर में नहीं घुसे, अपने ही घर में घुसे हैं ।
सुरेखा : यह क्या प्रलाप है ? - कौन हो तुम लोग ?
चारों : हम वहीं हैं, जो (मनमोहन की ओर संकेत सहित) यें हैं ।
सुरेखा : (खाझी हुई) लज्जा नहीं आती तुम लोगों को ? ये मेरे पति हैं ।
चारों : हम भी वहीं हैं ।
सुरेखा : (दोनों कानों पर हाथ रख, ऊँचे स्वर में) चुप रहो ! ऐसे पाप के
बोल मत बोलो । मेरा रोम-रोम सुलगने लगा है तुम्हारी बातें
सुनकर ... इनसे कुछ कहते क्यों नहीं ? गला क्यों नहीं पकडते ?
धक्के मारकर बाहर क्यों नहीं निकालते ? - बोलो - बोलते क्यों नहीं "[2]

मनमोहन और सुरेखा का प्रारंभिक दांपत्य जीवन सुखी था । क्योंकि उस समय मनमोहन और सुरेखा के मन में परस्पर मिलने की अतिव इच्छा थी । लेकिन कुछ दिनों बाद उन दोनों के बीच में पारिवारिक

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -75*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -75*

विघटन की दरारें पडती हैं । उसके परिणाम स्वरूप मनमोहन और सुरेखा को अपने सुखी दांपत्य जीवन से हाथ धोना पडता है । मनमोहन अपने अतीत के सुखी दांपत्य जीवन के संबंध में काले तथा सफेद नकाबवाले व्यक्ति से कहता है, - "कुछ सालों तक सब कुछ ठीक था । घर-घर का माहौल, सुरेखा - सुरेखा का साथ क्योंकि तब जिंदगी में इंतजार था - शाम बितने पर रात का, रात गुजरने पर सुबह का, सुबह होने पर शाम का ।"[1] उस वक्त मनमोहन एक पति एवं पिता का कर्तव्य अच्छी तरह निभाता था ।

लेकिन विवाह के कुछ दिनों पश्चात मनमोहन का व्यक्तित्व खण्डित होने लगता है । उसके व्यक्तित्व के पाँच भिन्न-भिन्न पहलू भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के रूप में सामने आते हैं । मनमोहन स्वयं अपने खण्डित व्यक्तित्व के बारे में कहता है - "साल पर साल बीतते गये । मैं वही था । सुरेखा वही थी । लेकिन सैंकडों बार उन्ही सुबहों और रातों को जीने के बाद अब सबकुछ बासीं हो गया है । वो ताजगी और नयापन सब बाँटता और घटता गया है । धीरे-धीरे मैलें कपडों के साथ धोबी के यहाँ, मिर्च-मसाला के पूँजो के साथ पसांरी की दूकान पर, दोस्तों - रिश्तेदारों के साथ मेल-मुलाकातों में पास-पडोस की घिसी पिटी बातों में ... लेकिन बच्चे थे जो चश्मा बनकर आँखो में लग गये और मुझे जोड रहे सुरेखा से घर से जिंदगी से ... ।"[2] मनमोहन का स्वभाव खण्डित होकर उसके अनेक रूप समाज के सामने आए हैं ।

मनमोहन के आलावा उसका स्वभाव निम्न चार रूपों में विभाजित हैं - पीले नकाबवाले के रूपमें मनमोहन कम्पनी कार्यालय के सीनिएर असिस्टँट मैनेजर के रूप में कार्यरत हैं जो व्यापारी और महत्वकांक्षी वृत्तियों का सूचक है । लाल नकाबवाले उसके स्वच्छंद एवं यौन संबंधों को उद्घाटित करता है । अपनी पत्नी द्वारा यौन संतुष्टि न होने पर वह अनेक महिलाओं से अपनी यौन वासना की पूर्ति करता है । मनमोहन का काले नकाबवाला रूप अवैद्य एवं भ्रष्ट कुप्रवृत्तियों का प्रतीक है और सफेद नकाबवाला रूप सभ्य, शिक्षित एवं सात्विक सद्वृत्तियों का द्योतक है । मनमोहन के यह प्रतिरूप समय- समय पर सक्रिय हो कर मनमोहन को अपने सोच से कार्य करने के लिए विवश करते हैं ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -107*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 108/109*

जिंदगी की शुरआत में मनमोहन कंपनी के दफ्तर में अपने वरिष्ठों को संतुष्ट करने के लिए अपने परिवार की चिन्ता किए बिना दिन-रात काम करता था जिस के फलस्वरूप उसका प्रमोशन भी हुआ । कुछ दिनों पश्चात खण्डित व्यक्तित्व के कारण कम्पनी के कार्य में उसका बिल्कुल ध्यान नहीं लगता था । पीले नकाबवाले व्यकित के रूप में मनमोहन दफ्तरकी घिसी -पिटी जिंदगी जी रहा था । उसके कारण उसे डायरेक्टर एवंम् मैनेजर से हमेशा डाँट फटकार खानी पडती थी । मनमोहन की कामयाबी को खण्डित हुआ देखकर मैनेजर कहता है - "मेरी समझ में नहीं आता मिस्टर खन्ना कि आपको हो क्या गया है ? अगर आप इसी तरह काम करोगे तो आप का क्या होगा, हमारा क्या होगा, इस कंपनी का क्या होगा ?" [1] इस बात पर डायरेक्टर भी अपना ताना मारता है जो मनमोहन को चुपचाप सिर झुकाकर सहन करना पडता है - "पिछले दो साल से मैं आपका रिकार्ड देख रहा हूँ । आप टारगेट तक पूरा नहीं कर पा रहे हैं ।"[2] इस तरह अपने वरिष्ठों को असंतुष्ट रखने पर भी पीले नकाबवाला व्यक्ति मनमोहन को दफ्तर में काम करने के लिए विवश कर रहा है । इस से स्पष्ट है कि पीले नकाबवाले व्यक्ति के रूप में मनमोहन कुछ अलग स्वभाव विशेष का व्यक्ति दिखायी देता है ।

विवाह के कुछ दिनों बाद ही मनमोहन पत्नी सुरेखा के साथ यौन संबंधों को बासी महसूस करने लगता है । अपनी अतृप्त काम-इच्छा तृप्त करने के लिए वह अंजना, वंदना, रचना, कल्पना आदि परस्त्रियों के साथ अनैतिक यौन संबंध प्रस्थापित करता है । वह किसी-न-किसी बहाने या अपने दफ्तर के काम के बहाने सप्ताह में तीन चार दिन घर से बाहर रहकर परस्त्रियों से अपनी यौन वासना की पूर्ति करता रहता है । जिस स्त्री के साथ मनमोहन के यौन संबंध थे वह स्त्री अंजना जब किसी दूसरे व्यक्ति के साथ विवाह कर के घर बसाने का इरादा मनमोहन के सामने स्पष्ट करती है तब खीज कर और क्रोधित होकर लाल नकाबवाले व्यक्ति के रूपमें आकर मनमोहन उसे कहता है, - "तुम समझती क्या हो ? तुम नहीं होगी तो मेरे शनिवार सुने हो जायेंगे ?" [3] इस प्रकार मनमोहन लाल नकाब में आकर अपनी अतृप्त कामेच्छा को तृप्त करने के लिए स्त्रियों को हमेशा बदलता रहता है । इस संबंध में काले नकाबवाला मनमोहन से कहता है - "जो टूट गया वो टूट गया । दोबारा जुड़ नहीं सकता । और अगर जोडोगे भी, तो साफ दिखाई देगा

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -88*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -88*
3. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -96*

और अंदर की चीज रिस-रिसकर बाहर आ जाएगी । इसलिए समझदार आदमी क्या करता है ? - नया गिलास ले लता है ।"[1] इतना ही नहीं अब सुरेखा और उसकी बेटी अलका इन दोनों के बीच अलका के प्रेमी के बारे में चर्चा चल रही थी । तब अलका अपने बारे में जो कुछ भी प्यार में हुआ है वह सब सुरेखा को बता रही थी । इसी समय मनमोहन इन दोनों की बातें सुन रह था । अलका के चले जाने के बाद सुरेखा अलका और उसके प्रेमि के बारे में राय माँगती हैं । तब मनमोहन कहता है, - "लडका निहायती ही बेवकूफ है । क्यों कि ? छह महीनों तक सिर्फ ब्लाऊज के बटनों तक पहूँच सका है ।"[2] अत: मनमोहन की इन बातों से स्पष्ट होता है कि लाल नकाबवाले व्यक्ति का स्वभाव कितना स्वच्छंद-यौन संबंधों को उद्‌घाटित करता है । वह इस संदर्भ में अपने बेटी को भी नहीं छोडता । अत: मनमोहन के खण्डित व्यक्तित्व का यह एक अलग पहलू दिखायी देता है ।

काले नकाबवाले व्यक्ति के रूप में मनमोहन भौतिक सुख सुविधाओं से युक्त, परिपूर्ण एवं समृद्‌ध जीवन जीने के लिए भ्रष्ट मार्ग तथा बेईमानी से पैसा कमाकर घर में सब वस्तुएँ, शानो-शौकत लाता है, जिसमें टेलिफोन, सोफा, कार, मेज, डाईनिंग टेबल आदि हैं । तब ही काले नकाबवाला मनमोहन से कहता है "तुम्हारा सबसे पुराना साथी तो मैं हूँ । तुम्हारा सगा भाई । तुम्हारा सच्चा दोस्त ।"[3] काले नकाबवाले की डिक्शनरी में खुद्‌दारी शब्द का अभाव स्पष्ट दिखायी देता है । वह पैसे को खून के रिश्ते से भी अधिक महत्त्वपूर्ण मानता है । इस संबंध में काले नकाबवाला मनमोहन से कहता है - "डी. एल. बी. - नौ आठ पाँच छह - कार का लायसेंस तुम्हारे होने का सबूत हैं । बैंक का पास बुक जिंदगी से तुम्हें जोडे हैं । लॉकर की चाबी - बीमे की पॉलिसी - मकान के कागजात ... यही तुम्हारे सच्चे सच्चे रिश्ते हैं । जो कभी नहीं बदलते, कभी बासी नहीं होते ।"[4] इस तरह पीला नकाबवाला व्यक्ति व्यक्तित्व को दुय्यम स्थान देकर पैसा बैंक बैलन्स आदि को जादाह महत्त्व देता है । यह एक अलग व्यक्ति विशेष यहाँ दिखायी देता है ।

सभ्यता एवं सात्विक सद्‌वृत्तियों के साथ सरल सीधी साधी जिंदगी जीने वाला मनमोहन सफेद नकाबवाले व्यक्ति के रूप में समाज के सामने आता है । सद्‌सद् विवेक बुद्‌धि से जीने वाला सफेद

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -105*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -84*
3. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -105*
4. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -116*

नकाबवाला और भ्रष्ट तथा बेईमानी से पैसे कमाकर जीवन जीनेवाला काले नकाबवाला इन दोनों की भूमिका में जमीं- आसमान का अंतर हैं । इसलिए काले तथा सफेद नकाबवाले व्यक्तियों में हमेशा संघर्ष होता हुआ दिखायी देता है । काला तथा लाल नकाबवाला व्यक्ति उसे बुरे मार्ग पर ले जाना चाहता है तो सफेद नकाबवाला उसे अच्छे मार्ग पर लाने की कोशिश करता रहता है । वह हमेशा मनमोहन को उसकी गलतियों का अहसास दिलाकर उसे समझाते हुए कहता है - ''घर वो हवा होती हैं, जो वहाँ बसी रहती है - वे अपनापन, वो जुडे होने के ताने-बाने, वो भरे-पूरेपन का अहसास । अगर न हो, तो वो घर नहीं, मकान है ।''[1] काले और सफेद नकाबवाले, के बीच मनमोहन की अच्छाई और बुराई के प्रति जो संघर्ष हुआ है, उससे सफेद नकाबवाले से कहता है कि अगर मनमोहन तुम्हारे कहने पर चलता तो जानते हो आज कहाँ होता ? उसी एक कमरे के घर मे, वही बस के धक्के में, उसी क्यू में । आज वो मेरे कहनेपर चलता है, तो कहाँ से कहाँ तक पहूँच गया है । आज उसके पास गाडी है, बंगला है, बंगले में सब सुविधाएँ हैं । क्या तेरी सभ्यता, सात्विकता यह सब लाने में कामयाब होती । आज वह मेरे कारण इस शानो-शौकत का उपभोग ले रहा हैं । तब सफेद नकाबवाला अपने मुँहतोड जवाब में काले नकाबवाले से कहता है कि इतनी सारी चीजें उसके पास होते हुए भी भीतर उसका दम घुट रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि सफेद नकाबवाले ने हमेशा मनमोहन की भलाई चाही है , वह कभी मनमोहन को गैर, अनाचारी मार्गपर भटकने नहीं देना चाहता । इससे मनमोहन और एक विशेष ढंग के भिन्न स्वभाव वाले व्यक्ति की पहचान होती है ।

इस मुख्य कथा के साथ-साथ उसका राजेश और अनील - वर्षा, इन दो विश्व विद्यालयीन युवक युवतियों की प्रेम कथा को भी इस मुख्य कथा में सम्मिलित किया गया है । इस में से अनिल और राजेश ये दो प्रेमी यौन कुंठाओं से ग्रस्त है । दोनों यौन पूर्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील दिखायी देते हैं । इन दोनों का स्वच्छंद प्रेम शारीरिक संबंधों तक ही सीमित हैं । दोनो बार-बार अपनी प्रेमिकाओं से शरीर सुख की माँग करते हैं । राजेश जब अलका की ओर शरीर सुख की माँग करता है तब अलका इस बात के लिए हिचकिचाती है, तब राजेश उसे समझाते हुए कहता है - ''इसमें डरने की कोई बात नहीं । तुम्हे कुछ नहीं होगा क्योंकि मेरे पास वो चीज है, सिर्फ पाँच मिनट का ही सवाल है ।''[2] अलका मनमोहन की बेटी है, वह घर में झूठ बोलकर क्लास का बहाना कर के हमेशा अपने प्रेमी के साथ सिनेमा देखने जाती है, उसके साथ

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -104*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ -97*

अवैध संबंध रखती है । 'लडका अनिक भी वर्षा नामक लडकी से अवैद्य यौन संबंध रखता है, तथा अवैद्य यौन संबंधों से संतती प्रतिरोध की दवा को भी इस्तेमाल करता है । नैतिक मूल्य विघटन का इससे सशक्त उदाहरण कौनसा हो सकता है ?

जयदेव तनेजा 'द्रौपदी' नाटक के बारे में अपने विचार स्पष्ट करते हुए कहते हैं - ''कथ्य को देखते हुए नाटक नाटक का नाम 'द्रौपदी' भ्रामक है, क्योंकि इसमें स्त्री की भूमिका प्रमुख नहीं है । इसमें स्त्री पुरुष के विभिन्न व्यक्तित्वों को उतना नहीं झेलती, जितना पुरुष स्वयं झेलता है । यह नाटक मूलत: मनमोहन के टूटने की प्रक्रिया और टूटने के तीखे एहसास से उत्पन्न छटपटाहट का नाटक है ।''[1]

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि दो अंको में संपन्न इस नाटक में कुल बीस पात्र हैं । इसमें पुरुष पात्रों की संख्या बारह और स्त्री पात्रों की संख्या आठ हैं । प्रस्तुत नाटक को नायिका का नाम दिया है लेकिन यह नाटक नायक प्रधान हैं । नायक के रूप में मनमोहन और नायिका के रूप में सुरेखा है । प्रस्तुत नाटक में अन्य प्रमुख पात्रों में मैनेजर, डायरेक्टर, राजेश, अलका, अनील, वर्षा, कश्यप, मुन्ना-मुन्नी, वंदना, रंजना, कल्पना, मंदा, अंजना आदि हैं ।

नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में सुरेखा के माध्यम से इस आख्यान को चरितार्थ किया है कि हर पत्नी द्रौपदी होती है । साथ ही इसमें पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव और यांत्रिकता के कारण मानव जीवन की घुटन, तनाव तथा पारस्पारिक बदलतें संबंधों को भी चित्रित किया है । नाटक में किसी निश्चित समस्या का समाधान नहीं हैं । क्योंकि यहाँ केवल कथा को प्रमुखता न देकर चरित्र को प्रमुखता दी है । साथ ही प्रस्तुत नाटक में सुरेखा मनमोहन के पारिवारिक जीवन में दांपत्य जीवन की घुटन, पत्नी की प्रति पति की असंतुष्टता, बचचों की लापरवाही, उनका नैतिक अध:पतन, व्यसनाधीनता आदि से इस बिखरे परिवार का पता चलता है ।

---

1. *जयदेव तनेजा - आज के हिंदी रंग नाटक, पृष्ठ -133*

वर्तमान युग में महानगरीय जीवन में एक पुरुष का अनेक नारियों के साथ संबंध स्थापित होता जा रहा है । प्रस्तुत नाटक में पाश्चात्य सभ्यता और पाश्चात्य विचार प्रणाली का प्रभाव भी परिलक्षित होता है । युवावर्ग के यौन-संबंध, अश्लील साहित्य के प्रति बढती रूचि, तथा एल. एस. डी. का प्रयोग आदि से कुवांरी माता जैसी अनेक समस्याएँ उभरते हम देख सकते हैं । निष्कर्षत: स्पष्ट है कि नाटककार ने यथार्थ की भावभूमिपर आधारित वर्तमान युवा पीढी की स्वच्छंद यौन संबंधों की प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है ।

2.3 "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक "

प्रस्तुत नाटक रचनाक्रम की दृष्टि से सुरेंद्र वर्मा का तीसरा नाटक है । इस नाटक का प्रकाशन सन 1975 में हुआ । तीन अंको में विभाजित प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने सामंत युग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को नाटक की कथावस्तु में केवल आधारभूत रूप में लेकर नियोग प्रथा के प्राचीन सूत्रोंद्वारा काम संबंधी समस्या, स्त्री पुरूषों का द्वंद्व और यौन कुन्ठाओं का प्रदर्शन समकालीन संदर्भों में किया है ।

इसमें नाटककार ने महाभारत का सहारा लेकर उदाहरण प्रस्तुत किया है । महाभारत में कुंती नियोग प्रथा का सहारा लेकर दानवीर कर्ण और पाँच पांडवों को जन्म दिया था । इस उदाहरण को समझाते हुए राजपुरोहीत ओक्काक से कहते हैं - "इतिहास साक्षी है कि हमारे देश में प्राचीन काल से यह रास्ता अपनाया गया है । एक एक पांडव का जन्म नियोग के द्वारा ही हुआ था ... उनमें से कोई भी अपने पिता की संतान नहीं था ।" [1]

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक की नायिका शीलवती मल्लराज्य के शासक राजा ओक्काक की पत्नी है । मल्लराज्य का राजा ओक्काक नपुसंक है । इसके कारण राजा न तो रानी को शरीर सुख देता है, न रानी माता बनने का सुख अनुभव कर सकती है । लेकिन रानी शीलवती ने अपने सुख एवं मन को यहाँ दुय्यम स्थान दिया है । अपनी शारीरिक सुखों की अपेक्षाओं को त्यागकर, राजपरिवार की मर्यादाओं को अपना सबकुछ समझकर संतोष के साथ रहती है । शादी के पाँच साल पूर्ण करने के पश्चात भी राजा की नपुसंकता के कारण रानी को बेटा और राज्य को उत्तराधिकारी नहीं मिलता ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -19*

इसी बीच तत्कालीन राज्यदर्शक के अनुसार राज्य के लिए उत्तराधिकारी की आवश्यकता महसूस होने लगती है । अत: आमात्य परिषद के अनुसार राज्य के लिए उत्तराधिकारी प्राप्त करने की दृष्टि से नियोग विधि प्रथा से रानी को बाध्य किया जाता है । रानी को धर्मनटी बनकर एक रात के लिए उपपति चुनने का अधिकार दिया जाता है ।

रानी उसे प्रारंभ में अमान्य करने लगती है । लेकिन मंत्रीपरिषद उसका कुछ भी नहीं सुनती । उसके सामने राज्य के लिए खडा हुआ उत्तराधिकारी का प्रश्न उपस्थित करती है और उसे नियोग विधि के लिए मजबूर करती है । महामात्य शीलवती को समझाते हुए यहाँ दिखायी दे रहे हैं - ''स्वीकार करता हूँ आपका उद्वेलन ... लेकिन यों सोचें कि बस, एक प्रक्रिया में से निकालने भर की बात है ... औपचारिकता, एक खानापुरी ... उन कुछ क्षणों के लिए अपने आपको बिल्कुल भूल जाए ... पलके मूँद ले, कान बंद कर लें ... बिल्कुल ढीला छोड दे शरीर को ... पाँचों इंद्रियों को अचेतन करके भावतंत्र को निर्जीव बना लें और मन की आँखों से लगातार केवल भावी परिणाम की ओर देखें ... अबोध मुद्रा, धुँधराली अलके, दुधियाँ दाँत .. नारित्व की सार्थकता ... मातृत्व की तृप्ति ...।''[1]

तात्कालीन समाज संतान विहीन समस्या का समाधान नियोग पद्धति के द्वारा संतान की प्राप्ति करके किया करता था । परंपरा में बंधी हुयी नारी शीलवती को अपने मन के खिलाफ आमात्य परिषद का यह निर्णय मानना पडता है । उस वक्त उसकी दशा बहुत अजबसी दिखायी दी है । वह अपने मन को वेश्याओं की तरह मजबूत करना चाहती है । लेकिन वेश्याओं की तरह कठोर मन करने में असफल हो रही है । जैसे ''सोचती हूँ और काँप काँप जाती हूँ । .. एक अनजाना भवन ... उस भवन का शयनकक्ष ... उस शयनकक्ष की शैय्या ... उस शैया पर ... (विराम । करूण मुस्कान से) वेश्याओं की मनोबल की जितनी सराहना की जाए, कम है ।''[2]

इस प्रकार से शीलवती द्विधा मनस्थिति में फँसी स्पष्ट दिखायी दे रही हैं । उसका मन मानसिक पीडा के नीचे दब् सा रहा है । इसी दबाव के नीचे अमात्य- परिषद का यह निर्णय शीलवती को मानना पडता है । राजा ओक्काक भी इस कारण से चिंतित है । उसके और मंत्री परिषद के बीच उसी कारण कुछ

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -*

नोक झोंक होती है । लेकिन ओक्काक को भी अमात्य परिषद के सामने अपने घुटने टेकने पडते है । अंत में मानसिक तान-तनाव, घुटन और निराश अवस्था में वह अपनी सहमती देती है । वह मजबूरी से कहता है - "कह तो दिया ।" [1]

अन्त में रानी शीलवती एवं राजा ओक्काक को अमात्य परिषद के सामने झुकना पडता है । राजमहिर्षी शीलवती अमात्य परिषद के निर्देशानुसार धर्मनटी के रूप में एक रात के लिए किसी भी पुरुष का वरण करने के लिए हाथ में जयमाला लेकर राजप्रांगण में उतरती है । उसके पुर्वकाल का प्रेमी आर्य-प्रतोष एक रथ से आकर उसके सामने खडा रहता है । शीलवती उसे देखकर बिना विलंब उसके गले में जयमाला डाल देती है । शीलवती जब सारे संस्कारों के जाल, जीवन मूल्य और सीमाओं को छिन्न भिन्न कर संपूर्ण मनोबल के साथ नियोग के लिए प्रतोष के पास जाती है, तब प्रतोष के यह कहने पर कि तुमको बिना स्पर्ष किए, जैसी आयी हो वैसी ही वापस भेज दूँ तो शीलवती को यह कथ्य असह्य हो जाता है । तब विव्हल होकर शीलवती कहती है - "नहीं ... तुम मुझे इतना कठोर दण्ड नहीं दे सकते, मेरे साथ इतना बडा अन्याय नहीं कर सकते ... (झुक कर घुटनों के बल बैठ जाती है । उसके दोनों पैर अपनी बाहों में घेर लेती है, घुटनों से सिर टिका देती है ।) तुम नहीं जानते मैंने कितनी यातना सही हैं ।" [2] कहने की आवश्यकता नहीं कि शीलवती अपनी अतृप्त यौनाकांक्षा को तृप्त होने के इस सुनहरे अवसर को खोना नहीं चाहती । अत: वह प्रतोष में काम-चेतना जगाने के लिए अपने कपोल एवं अधरों से स्पर्ष करती है । प्रतोष के बाँहे फैलाने पर वह उनमें सिमट कर वक्षस्थल पर सिर टिका देती है ।

प्रतोष के साथ रतिज संबंध स्थापित होने पर शीलवती का संपूर्ण जीवन परिवर्तित हो जाता है । अपने पति से पूरे पाँच साल में जो सुख, आनंद प्राप्त नहीं हुआ वह उसे प्रतोष से एक रात्रि में मिल जाता है । अपने पति ओक्काक को यह बात शीलवती स्पष्ट शब्दो में बताती है ... "कितना सुख देता है यह शरीर ... मुझे बलात सारी रात किसी ने नहीं जगाया .. मैने नींद से बोझिल पलकें झपकाते हुए किसी से मनुहारे नहीं की ...मैंने तकिए में मुँह छुपाए पहरों गुपचुप बातें नहीं कि (विराम) जब दो शरीर पास आते हैं, तो सम्मिलन का व्यक्तिगत - इतिहास बनता है .. निकट आने की पूरी प्रक्रिया, अलग - अलग सोपानों पर

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -39*

एक - दूसरें की प्रतिक्रिया की जानकारी ... देने का आवेग ... लेने की व्याकुलता .. यह साझेदारी मेरे जीवन में कभी नहीं आयी ।"[1] शीलवती यह भली भाँति जानती है कि उसको यह सुखद अनुभव होता ही कैसे, जब कि उसका पति पौरुष्य हीन है । ओक्काक जब शीलवती पर मर्यादाओं का बंधन लगाकर मर्यादित करना चाहता है, परंतु शीलवती पाँच वर्ष तक मर्यादा में रहने के बाद अब मर्यादा में रहना नहीं चाहती; क्योंकि उसे मर्यादा में इतना संतोष नहीं मिला, जितना एक रात की तृप्ति में । वह ओक्काक से स्पष्ट कह देती है, " ... इतना सुख, इतनी सिहरन, इतना रोमांच ... (सित्कार सहित) कल रात कितनी बडी क्रांति हुई है मेरे जीवन में .. मेरे तन - मन का इतिहास ही बदल गया है ।"[2]

स्त्री की शोभा लज्जा होती है और जब वह निर्लज्ज हो जाए तो शीलवती जैसा व्यवहार या आचरण करने लगती है । शीलवती भी मर्यादा की सीमा को तोडकर महामात्य से कहती है : "इन खोखले शब्दों का जादू टूट चुका है अब । ..... (महामात्य, राजपुरोहित, महाबलाधिकृत एवं ओक्काक की ओर बारी बारी से देखती है) मर्यादा ! ××× ..... सब पुस्तकीय ! ..... (उद्धत सी) लेकिन मुझे पुस्तक नहीं जीना अब । ... मुझे जीवन जीना है ।"[3] इसलिए तो वह गर्भनिरोधक औषधि खा लेती है, ताकि पुन: दो बार और सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक रति-प्रक्रिया से आनंदित होने का अवसर मिल सके ।

नाटक के अंत में, शीलवती अत्याधुनिक प्रतीत होती है । परंपरा के अनुसार गर्भधारणा के लिए एक या दो बार समागम किया जाता था । परंतु यहाँ शरीर सुख के लिए बरसों से भुखी शीलवती और दो अवसर माँगती है । राज्य परिषद के मातृत्व के उद्देश्य को वह गौण स्थान देती है और शरीर सुख को प्रधान स्थान । उसके कथन से यह बात स्पष्ट रूप से दिखायी देती है, "उस आवेश और अकुलाहट में ... उस उत्तेजना और उन्माद में ... उन साँसों ओर उच्छ्वासों में ... कौन सी स्त्री होती है ... जो होनेवाली संतान का ध्यान कर पाती हो ? नारित्व की सार्थकता मातृत्व में नहीं है, महामात्य ! है केवल पुरुष के इस सुख में । मातृत्व केवल एक गौण उत्पादन है ।"[4]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 48*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 49*
3. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 51*
4. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 52*

इस प्रकार काम वासना से भुखी शीलवती अमात्य परिषद की बनाये योजना पर पानी फेर देती है । अपने शरीर की भुख मिटाने के लिए वह अमात्य परिषद से उपपति चुनने के ओर दो अवसर माँगती है । अमात्य परिषद इस रात का कुछ दिनों तक परिणाम देखने की माँग करती है । लेकिन शीलवती द्वारा स्पष्ट होता है कि ..... "रात का कोई परिणाम नहीं होगा । ..... मेरे उपपति ने मुझे एक निरोधक औषधि दे दी हैं ... ।"[1] इस घटना से मंत्रीगण हतबल हो जाते हैं । अत: शीलवती को उसकी माँग के अनुसार और एक अवसर दिया जाता है । "मल्लराज्य के हर नागरिक को - सूचना दी जाती हैं - कि आज से ठीक एक सप्ताह बाद, पूर्णमासी की संध्या को - राजमहिषी शीलवती धर्मनटी बन कर - राजप्रांगण में उतरेंगी । ... राजमहिषी शीलवती - अपनी इच्छा के अनुसार - किसी भी नागरिक को - एक रात के लिए सूर्य की अंतिम किरण से - सूर्य की पहली किरण तर उपपति के रूप में चुनेंगी ।"[2]

और इसी दरमियान नाटक अपनी अंतिमावस्था पार कर देता है ।

: निष्कर्ष :

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक तीन अंकों में संपन्न है । इस नाटक में कुल आठ पात्र हैं । इनमें पाँच पुरुष तथा तीन स्त्री पात्र हैं । प्रस्तुत नाटक नायिका प्रधान है । इस नाटक की नायिका महारानी शीलवती है । तथा नायक के रूप में ओक्काक और प्रतोष के बीच खींच तान दिखायी देती हैं । महामात्य, महाबलाधिकृत, राजपुरोहित, महत्तारिका, आदि पात्रों के दर्शन भी प्रस्तुत नाटक में अन्य प्रमुख पात्रों के रूप में होते हैं ।

प्रस्तुत नाटक के अवधारणा के पीछे सुरेंद्र वर्मा का एक महत्त उद्देश्य लक्षित होता है । नाटककार ने इस नाटक में अस्त हुई सामाजिक परंपराओं को नए संस्कारों में ढालने का प्रयत्न किया है । 'नियोग प्रथा' इसका उदाहरण है । नपुंसकत्व के कारण नि:संतान स्त्री पुरुष बाह्य संबंध तलाश कर संतान प्राप्ति का प्रयत्न करते हैं । वास्तव में वह नियोग का ही नया रूप है । नाटककार ने पति की कुण्ठित यौन आकांक्षाओं को नए सिरे से ढाला है । आदर्श भारतीय नारी मूल्यों को सर्वस्व माननेवाली शीलवती आर्य

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -53*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ -53*

प्रतोष के संवेदनशील संपर्क में आकर पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जाती है । नारी मूल्यों की प्रतिष्ठापना के लिए इस नाटक की अवधारणा की गयी है ।

अत: स्पष्ट है कि यह नाटक सुदूर अतीत की पृष्ठभूमि में शीलवती नामक एक स्त्री के एक भयावह अंतर्द्वन्द्व को प्रस्तुत करता है । जो कि अपने नपुंसक पति ओक्काक के प्रति अपनी इमानदारी और शारिरिक सुख के अभाव के कारण परिस्थितिजन्य कटुता और विवशता के बीच जीतिव है । यह नाटक समसामायिक स्तर पर मूल्यों के बदलाव के संदर्भ में कुछ जातक से प्राप्त ओक्काक और शीलवती के जरिए दाम्पत्य संबंधों की गहरी और बारीक छानबिन करता है तथा स्वयं सत्ताधारी की विवशता, नपुंसकता और त्रासदी को रेखांकित करता है ।

2.4 'आठवाँ सर्ग'

'आठवाँ सर्ग' सुरेंद्र वर्मा का सर्वोत्तम नाटक है । रचनाक्रम की दृष्टि से यह उनकी चौथी रचना है । प्रस्तुत रचना का प्रथम प्रकाशन सन 1976 को हुआ । प्रस्तुत नाटक 'हत्या' नाम से दो अंकों में 'कथा' में प्रकाशित हो चुका था । बाद में 'हत्या' नामक नाटक को ही 'आठवाँ सर्ग' में संवर्द्धित कर दिया गया । प्रस्तुत नाटक तीन अंकों में विभाजित है तथा इसका तीसरा अंक दो दृश्यों में दर्शाया गया है ।

नाटक की कथावस्तु इस प्रकार है - कालिदास को मदनोत्सव के दिन राजदरबार में सम्मानित किया जाना था, परंतु 'कुमार संभव' में शिव-पार्वती के उद्दाम रतिज - संबंधों का चित्रण इस आठवें सर्ग में किया था । इन संबंधों को उन्होंने एक साधारण पति- पत्नी के संबंधों के रूप में देखकर दर्शाया था । लेकिन धर्माध्यक्ष को यह चित्रण अश्लील लगता है और वे इसके प्रति कडवा विरोध प्रदर्शित करतें हैं । अत: परिणामस्वरूप सम्मान के स्थान पर वहाँ कालिदास का अपमान हो जाता है । इसी की मार्मिक प्रस्तुति नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में की हैं ।

कालिदास और कीर्तिभट्ट एक मास के बाद आठवें सर्ग की निर्मिति कर अपने नगर लौटते हैं । इसी उपलक्ष्य में राज्य की ओर से उनके सम्मान समारोह का आयोजन किया गया था । सारी उज्जयिनी नगरी

इसका आनंद लुटते हुए झूम नाच रही थी, युवतियाँ उन्मुक्त हो कर इस समारोह में अबीर और गुलाल की बरसात कर रही थीं । सम्मान कालिदास का होने वाला था, उसके मस्तक पर सम्राट सुवर्ण पट्टा बांधने वाले थे, धर्माध्यक्ष द्वारा उनपर फूलों का वर्षाव होनेवाला थ लेकिन इन में मस्त सारा उज्जैयिनी नगर था ।

सम्मान समारोह के दिन कालिदास का कथन सुनने के लिए राज्य से मंत्रीगण, धर्माध्यक्ष, सम्राट तथा जनता आदि सब सभा मंडप में बडी उत्सुकता से कान-आँख लगाए बैठे हैं । जब वह क्षण आता है - कालिदास उठकर अपने 'कुमार संभव' के आठवें सर्ग का कथानक पढने से पहले धर्मगुरू को अभिवादन करता है और काव्य पाठ प्रारंभ करता है । 'कुमार संभव' के सात सर्गों का संक्षिप्त विश्लेषण बताकर आठवें सर्ग को विस्तार से बताना प्रारंभ कर देता है । इसी सर्ग में शिव-पार्वती की विलास क्रीडा का वर्णन था । कालिदास इसका विस्तार से वर्णन करने लगे जैसे - ''ज्यों ही वह स्थल आया कि शयनागार में उमा और महादेव एक दूसरे को पराजित करने पर तुले हुए थे । दोनों के केश छितरा गए ... चन्दन पुछ गया ... उमा की मेखला टूट गयी ... (अटक जाती है । खाँसकर) क्रीडा-केली से महादेव का मन नहीं भरा ... ।''[1] उसी उक्त धर्मगुरू बहुत ही क्रोधित अवस्था में उठें क्योंकि उनका श्रद्धास्थान महादेव ही था । अत: उठकर कहने लगे कि इस सर्ग में शिव-पार्वती क्रीडा का वर्णन है । इस कारण इस नाटक को अश्लीलता की कोटि में बिठलाकर कालिदास को अस्वीकार किया गया । महाकाल के पुजारी और धर्माध्यक्ष कालिदास की इस कृति की कटु आलोचना करने लगे । धर्माध्यक्ष उनपर कामुकता का आरोप लगाते हैं । धर्मगुरू खडे होकर गरजकर बोलते हैं - ''यह सर्ग अत्यंत अश्लील हैं । जगत पिता महादेव और जगजननी पार्वती के भोग विलास का ऐसा उद्दाम ऐसा स्वच्छंद, ऐसा नग्न चित्रण । ... इसका रचियता पापी हैं । इसके श्रोता पापी हैं । ..... ऐसे अधर्मी और अनाचारी कवि के सम्मान में समारोह में जो भाग ले, वह पापी है ..... । जो उसका निमित्त बने वह पापी हैं । जो उसमें सहायता दे, वह पापी हैं । ... यह सर्ग अतयंत मर्यादाहीन है । बहुत अश्लील है । 'कुमार संभव' पर प्रतिबंध लगाया जाए, क्योंकि कच्छे मस्तिष्कपर इसका बुरा प्रभाव पडेगा ।''[2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -38*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -38/39*

धर्मगुरू, धर्माध्यक्ष, मंत्री परिषद के सदस्य और व्यापारी संघ के प्रधान सोमदत्त आदि लोगों के उग्र एवं भयानक विरोध के कारण कालिदास का सम्मान समारोह अपमान समारोह में परावर्तित होता है । धर्माध्यक्ष के इस मत का खंडन करने का प्रयत्न कालिदास के साथ उनके मित्र आर्य सौमित्र भी करते हैं । पति-पत्नी के पारस्पारिक संबंध कभी भी अश्लील नहीं हुआ करते इस तरह वे अपना स्पष्टीकरण देना चाहते हैं । लेकिन ये सभी लोग कालिदास की कुछ नहीं सुनते । वे उनकी रचना पर मनमाने आरोप करते हैं । इस बात पर क्रोधित होकर कालिदास आरोप करने वालों पर टूट पडते हैं । आवेश में आकर कहते हैं - " ... जिन्हें यह भी मालूम नहीं की रस कौन-कौन से खेत की मूली है, आश्रय किसे कहते हैं, आलम्बन क्या होता है, वे मेरे काव्य पर मनमाने आरोपों की वर्षा करें ? दिन दहाडे बिना किसी अधिकार के साहित्योद्यान में घुस आयें और वर्षों के श्रम के बाद फले फूले गुल्मों को उन्मत्त साँडों की तरह मसलें कुचलें, रौंदे ? उस सम्राट के सामने, जो अपने आप को सहृदय कहता है ... ? "[1] अत: 'कुमार संभव' पर धर्माध्यक्ष द्वारा लगाया गया अश्लीलता का आरोप कालिदास अमान्य करता है ।

लेकिन उस राज्य का धर्मतंत्र चुप नहीं बैठता यह काव्य अश्लीलता की कोटि मे बैठता है या नहीं इस की जाँच के लिए सम्राट की ओर से पाँच सदस्यों की समिति गठित की जाती हैं । इस समिति के सदस्य पूर्ण रूप से साहित्येतर व्यक्ति हैं । उनका काव्य तथा साहित्य से दूर का भी रिश्ता नहीं हैं । यह समिति कालिदास से न्यायालय में सार्वजनिक रूप से क्षमा याचना की माँग करती है । अपनी कलाकृती की ऐसी विडंबना देखकर कालिदास के मन पर गहरा आघात होता है । इसमें वह अपना संतुलन खो बैठता है । उसी आवेश में वह कहता है - "मैं वहाँ जाऊँगा ? तुम्हारी उस अन्धी समिति के सामने (आदेश पत्र धर्माध्यक्ष की तरफ भूमि पर फेंकता है ।) तुम मतिमन्दों को मनाने ? समझाने अरे धर्माध्यक्ष । मैं विष खा लूंगा विष ... डूब मरूँगा शिप्रा में लेकिन किसी भी मूल्य पर ... ।"[2] सम्राट चंद्रगुप्त भी कालिदास को अपनी तरफ से पूरी सहानुभुति दर्शाकर शरण आने के लिए कहते हैं । अपनी मजबूरी और विवशता को भी उसके सामने प्रकट करते हैं और कालिदास को एक सुझाव भी देते हैं -

"चंद्रगुप्त : क्या यह नहीं हो सकता कि आठवाँ सर्ग आरंभ होने पर तुम एक पंक्ति में यह लिख दो की विवाह के बाद उमा और महादेव के यहाँ यथासमय कार्तिकेय का जन्म हुआ .. और यह सारी विलास- क्रीडा हटा दो ?

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -53*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -49*

कालिदास : और उसके बाद एक पंक्ति में लिख दूँ कि कार्तिकेय यथासमय बडा हुआ और उसने तारक का वध कर दिया । ... और काव्य समाप्त कर दूँ ?

चंद्रगुप्त : कालिदास । तुम समझते क्यों नहीं ?

कालिदास : कैसे समझूँ ? सातवाँ सर्ग नायक और नायिका के ब्याह से समाप्त होता है और आठवें सर्ग की पहली पंक्ति में पुत्र का प्रादुर्भाव हो जाएगा ? ... बीच के नौ महीने नवदम्पत्ति कहाँ रहें ? कैसे रहें ? ... क्या रूपरेखा रही उनके जीवन की ... ?'' [1]

यह बात भी चंद्रगुप्त के मस्तिष्क पर प्रभाव नहीं डालती । इस प्रकार स्वतंत्रचेता प्रतिभाशाली, संवेदनशील कलाकार नया साहित्यकार हार जाता है । शापन द्वारा उसके कलाकार की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लग जाता है । एक ओर स्वतंत्र्यता की अभिव्यक्ति का मूलभूत अधिकार और दूसरी ओर राज्याश्रय से वंचित होकर राज्य विरोधि बनना इस तनाव में कालिदास पराजीत होता है । इसी दशा में वह निर्णय करता है - ''कुमार संभव' को मैं अधूरा छोड दूँगा, आठवें सर्ग पर ... आगे नहीं लिखुँगा । इस रचना को एक प्रकार से भूला ही दूँगा । यह कभी मेरे घर से बाहर नहीं निकलेंगी । किसी गोष्ठी में इसका पाठ नहीं होगा । किसी तक इस की प्रतिलिपि नहीं पहुँचेगी । ... इतने से लोग सन्तुष्ट हो जाएँगें ? फिर तो किसी को आपत्ती नहीं होगी ?'' [2]

अश्लीलता के आरोप के कारण कालिदास 'कुमार संभव' को आठवें सर्ग पर ही अधूरी अवस्था में छोड देता है । इसी समय से ही कालिदास को साहित्यकार मानने से इन्कार किया जाता है, जिसका कालिदास के मनपर गहरा आघात हो जाता है । फिर भी कालिदास साहित्य का लेखन करना नहीं छोडता । वह 'शाकुन्तल' की रचना करता है । उस की प्रसिद्धि भी बहुत होती है । भारत के कोने कोने में शाकुंतल की कीर्ति गूँजने लगती है । लोग पागलों की तरह 'शाकुंतल' और उसके पात्रों की चर्चा करने लगते हैं और शासकीय सम्मान कालिदास के घर अपने आप चला आता है -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -55*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -58*

''चंद्रगुप्त : कामरूप से राजदूत आये थे आज अपराह में । बडे उत्साह से 'शाकुंतल' नाटक के बारे में पूछने लगे मैंने कहा कि सायंकाल आप नाटक का प्रदर्शन भी देख सकते हैं और नाटककार का ... अभिनंदन भी ।
(चंद्रगुप्त बाहरी द्वार की ओर संकेत करता है । ... प्रतिमा चौकी पर रख देता है ।)

कालिदास : क्षमा करें । उपस्थित न होने के पीछे कोई अविनय नहीं हैं । शिप्रा की वर्तुल की लहरें देखते अचानक तीन वर्ष पहले की याद आ गयी । ... आज ही का दिन था ... ऐसा ही उत्सव ... ऐसा ही आल्हाद ... और तब लगा की राज्य मेरे सम्मान के लिए इतना उतावला क्यों हैं ... (विराम)

चंद्रगुप्त : ओह ...!

कालिदास : जीवन के एक मोड पर सत्ता की साहयता की आवश्यकता थी .. अब नहीं है । ... (ठहरकर) अब ? अगर शासन मेरी रचना पर यहाँ रोक लगायेगा तो वह दूसरे राज्य में सप्तम सुर में सुनी जायेगी । मुझे बन्दीगृह में डाल देगा, तो संकिर्णबुद्धि और कुटील ? मन कहलायेगा और अगर मेरी हत्या कर देगा तो लोकमत उसके विरूद्ध आषाढ के पहले काले कजरारे मेघों की तरह भडक उठेगा । ... '' [1]

कालिदास जैसे साहित्यकार को 'कुमार संभव' के संदर्भ में जहाँ परंपरावादी, रूढिग्रस्त लोगों के सामने घुटने टेकने पडते हैं, ऐसे प्रतिभाशाली, संवेदनशील कलाकार का जहाँ अपमान होता है, उसी जगह तीन सालों के बाद 'शाकुंतल' के उपलक्ष्य में उसका व्यापक जन अभिनंदन और शासन द्वारा सम्मान समारोह भी आयोजित किया जाता है । उस समारोह में कालिदास जान - बुझकर अनुपस्थित रहता है । शासन द्वारा होनेवाला सम्मान ठुकराकर अपने कलाकार की श्रेष्ठता और अपराजेयता को प्रमाणित करता है । डॉ. चंद्रशेखर के मतानुसार - ''कालिदास का सत्ता से समझोता, पुरस्कारकामिता, अभिनंदन - धर्मिता, राज्य प्रश्रय से रचना-स्वीकृति, हिंदी - लेखन के ऐसे की समकालीन वास्तविकता पर एक क्रुर व्यंग्य है ।''[2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ -71, 72*
2. *डॉ. चंद्रशेखर - समकालीन हिंदी नाटक - कथ्य चेतना, पृष्ठ - 296*

: निष्कर्ष :

'आठवाँ सर्ग' नाटक की कथावस्तु तीन अंकों में सम्पन्न होती है । प्रस्तुत नाटक का तीसरा अंक दो दृश्यों में विभाजित है । नाटक में कुल आठ पात्र हैं । उसमें पाँच पुरुष और तीन स्त्री पात्रों ने अपनी भूमिका बडी सफलता से निभायी है । प्रस्तुत नाटक नायक प्रधान है जिस का नायक कालिदास है । नायिका के रूप में प्रियंगुमंजरी है । नाटक में इन प्रमुख पात्रों के अलावा अन्य प्रमुख गौण पात्र हैं चंद्रगुप्त, धर्माध्यक्ष्य, कीर्तिभट्ट, प्रियंवदा और अनसूया ।

नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में जाती - बिरादरी की सीमा रेखाओंको तोडकर चंद्रगुप्त की बेटी प्रियंगुमंजरी की शादी कालिदास से कराकर आधुनिक अंतर्जातीय विवाह के साथ इस घटना का संबंध दिखाकर प्राचीनता में आधुनिक समाज की झलक प्रस्तुत की है । अर्थात प्रियंगुमंजरी एक राजकुमारी होने के साथ साथ क्षत्रिय है और कालिदास एक कवि है और वे जाति से ब्राह्मण हैं । यहाँ आधुनिकता की दृष्टि से प्राचीन पात्रों के जरिए युगिन स्थिति को दर्शाना नाटककार की एक विशिष्ट उपलब्धि है ।

प्रस्तुत नाटक में सुरेंद्र वर्मा ने कालिदास के माध्यम से नए एवं आधुनिक साहित्यकारों की स्वतंत्रता, अस्मिता जगाने के साथ ही साथ उनमें आनेवाली समस्या का समाधान भी प्रस्तुत किया है । चंद्रगुप्त और कालिदास का राज्य और साहित्यकार के संबंध के वार्तालाप से साहित्यकार की अस्मिता की पहचान होती है ।

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि सुरेंद्र वर्मा का यह नाटक आधुनिक दृष्टि से एक विशिष्ट उपलब्धि है, जो लेखकीय स्वतंत्र्यता के पक्ष को उभारती है ।

2.5 'शकुंतला की अँगूठी'

'शकुंतला की अँगूठी' सुरेंद्र वर्मा रचनाक्रम की दृष्टि से पाँचवा नाटक है । इसका प्रकाशन सन 1990 को हुआ है । प्रस्तुत नाटक चौदह दृश्यों में विभाजित हैं । प्रस्तुत नाटक की केंद्रीय कल्पना कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम् (संस्कृत) नाटक की नायिका शकुंतला से संबंधित है ।

'पुरूवंशी' इलिल के पुत्र दुश्यंत शिकार खेलते हुए कण्व ऋषी के आश्रम पहुँचे । उस समय कण्व ऋषी आश्रम में नहीं थे । शकुंतला ने उनका स्वागत किया । वे शकुंतला पर मुग्ध हो गये । कुछ समय पश्चात दुश्यंत शकुंतला से गंधर्व विवाह करके उसे शिघ्र ही अपने पास बुलाने का आश्वासन देकर अपने नगर वापस चले गए । तीन साल बाद शकुंतलाने एक पुत्र को जन्म दिया । कण्व ऋषी ने बारह वर्षों के बाद बच्चे सहीत शकुंतला को दुश्यंत के पास भेज दिया । किंतु राजा ने उसे न पहचानने का अभिनय किया । तब आकाशवाणी हुई कि शकुंतला दुश्यंत की पत्नी है । तब राजा भी उन दोनों को स्वीकार करता है । राजा की माँ ने भी उन दोनों का अत्यंत प्रेम से स्वागत करके उन्हें अपना लिया ।

कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतलम' के पूर्व अभ्यास की जगह कुमार जो इस ग्रुप का नेता तथा नाटक का निर्देशक है, अकेला बैठा आलेख पढ रहा है । कोई भी सहयोगी अभिनेता न आने के कारण कुमार दरवाजे की ओर पीठ करके जोर से आलेख पढने लगता हैं । कुछ देर बाद चमन आता है और कोई भी नाट्य सहयोगी नहीं आया यह देखकर उनके बारे में व्यंगात्मक गीत गाना शुरू करता है, ...

"... एमेचर हिंदी थियेटर की देखो यह माया,
हो गया वक्त रिहर्सल का पर कोई नहीं आया,
घंटे भर से शकुंतला को मिली नहीं हैं बस
डायरेक्टर दफ्तर में ओवर टाईम करें बेबस ।
सूत्रधार ने अपने माफिक रोल नहीं पाया
एमेचर हिंदी थियेटर की .... ।" [1]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ - 3*

कुछ देर बाद एक-एक करके नाट्यकर्मिओं का आगमन होने लगता है। निशा इस नाटक में शकुंतला की भूमिका निभा रही है उसे बीमारी के कारण डॉक्टर ने महीने भर के लिए बिस्तर से उठने के लिए मना कर दिया है। इसके बाद गीता माथुर को इस रोल के लिए चुना गया लेकिन वो भी फिल्म में चान्स मिल जाने के कारण बॉम्बे चली जाने वाली है। अत: शकुंतला की भूमिका साकार करने के लिए कोई भी अभिनेत्री नहीं मिल पा रही थी। अभिनेत्री मिल जाने तक कुमार के सामने शकुंतला की फ्रॉक्सी करने के सिवाय कोई भी रास्ता उपलब्ध नहीं था। अत: रिहर्सल के दरमियान कुमार वहाँ उपस्थित अभिनेताओं से ही शकुंतला की फ्रॉक्सी करवाता था। जैसे -

"कुमार : पेज सात ... शकुंतला, प्रियंवदा और अनसूया पौधों को पानी दे रही हैं ... मंदाकिनी, शकुंतला, रेखा - अनसूया और प्रियंवदा दोनों के डॉयलॉग बोल दो ... दुश्यंत ? अरे पराशर नहीं आया आज भी ?

चमन : अगले महीने उसका शो है ... गोदान का उसके बाद ही आयेगा।

कुमार : (चिंता से) कब तक फ्रॉक्सी से ब्लोकिंग होगी ... टाइगर तुम दुश्यंत कर दो।"[1]

इसी तरह कुछ देर रिहर्सल शुरू रहती है। तभी कनक नामक लडकी का आगमन होता है। वह गीता माथूर की ओर से प्रस्तुत नाटक में शकुंतला की भूमिका के लिए कलाकार के रूप में आती है। एक अच्छी कलाकार है इस बात की पुष्टि रेखा द्वारा उसी वक्त मिलती है। कुमार कनक से कुछ सवाल पूछता है। सही जवाब मिल जाने पर कुमार उसे शकुंतला की भूमिका साकार करने के लिए सौंप देता है।

कुमार जिस नाटक का निर्देशन कर रहा था वह नाटक प्राचीनकाल का था। नाटक में संवादों के साथ साथ शारीरिक अभिनय को भी दर्शाना एक महत्त्वपूर्ण बात थी। लेकिन कनक इस समय अभिनय करने में कचरा रही थी। अपने सहज सुंदर अभिनय को साकार करने में असफल नजर आ रही थी। कुमार उसे अनेक बार समझाता है, फिर भी मनचाहा अभिनय उसके हाथों से नहीं होता। तब कुमार उसे अभिनय कैसे किया जाता है, अभिनय में कौन कौन से शारीरिक अवयवों का इस्तेमाल किया जाता है, उनका क्या

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ - 7*

महत्त्व हैं, अभिनय क्या होता है । प्यार और आँखों के बीच क्या संबंध हैं आदि के बारे में पूरी जानकारी देता है । लेकिन इस समय कुमार की आवाज बढ गयी थी । जाने -अनजाने में वह कनक पर बरस पड रहा था । अनेक बार गलती होने के कारण उसको गुस्सा आना स्वाभाविक था । इसी गुस्से में कनक पर वह बुरी तरह बरस पडता है । जैसे

" ... अगर महसूस करने का मद्दा नहीं तो
क्यों आती हैं नाटक में काम करने ? ...
जाइए, शादी करके गोल-मटोल बच्चे पेदा
कीजिए और मियां के इनक्रीमेंट से लौ
लगाइए ।" [1]

इन बातों से कनक के दिल को बडी चोंट पहुँचती हैं । वह बहुत दु:खी होती है । लेकिन इस रोल को न ठुकराते हुए वह आत्मविश्वास के साथ आगे काम करने लगती है । कही गयी बातों का कुमार पर भी गहरा असर होता है । वह भी बहुत दु:खी होता है । पश्चाताप में वह कहता है, "कोमल अंगों वाली, मैंने जो तुम्हारा अपमान किया था । उसका दु:ख अब अपने मन से निकाल दो । जाने क्या था, जिससे वह घना अंधेरा मेरी स्मृति पर घिर आया था ... ।" [2]

तब से कनक के अभिनय में परिवर्तन होता है । वह शकुंतला की भूमिका तन-मन लगाकर साकार करने लगती हैं । कुछ दिन ऐसे ही निकल जाते हैं तब कुमार अचानक दुश्यंत का स्क्रिप्ट फ्रॉक्सि के लिए टाइगर से अपनी ओर लेता है और खुद् दुश्यंत बन जाता है । इसी अभिनय अभ्यास के दौरान कनक की ओर कुमार आकर्षित होने लगता है । कनक के प्रति उसके दिल में प्यार के फूल खिलने लगते हैं । उसकी रातों की नींद हराम हो जाती हैं । यही सिलसीला कनक की ओर से भी था । वह भी कुमार से प्यार करने लगी थी, लेकिन प्रथम प्रेम संवेदना को व्यक्त करने से डर रही थी । उसने अपने पूर्व जीवन में प्यार का खेल खेला था । इसी प्यार में किसी नील नामक युवक ने उसे धोखा दिया था । उस वक्त की टूटी, जर्जर मानसिक अवस्था से वह सँभल गयी थी । इसलिए प्यार का जिक्र कुमार के सामने करने के लिए वह डरती थी । वह किसी पर भी विश्वास करना नहीं चाहती ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ - 33*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ -25*

इसी दरमियान कनक की माँ भी अपने बेटी की शादी के बारे में सोचने लगी थी । उसी वक्त कनक अपने घर में शकुंतला के डायलॉग याद कर रही थी । इसी बीच वह अपनी माँ को भी ले लेती है और उसके हाथ में स्क्रिप्ट थमाकर अपनी गलतियाँ ढूढने के लिए कहती हैं । उस स्क्रिप्ट में शकुंतला अपने पति दुश्यंत के घर जा रही थी, जाते जाते अपनी प्राण प्रिय वस्तुएँ प्रियंवदा और अनसूया को सौंप रही थी । सब चिजों को ठिकाने लगाकर जाने लगती है, तभी शकुंतला के आँचल को कोई खिंचता है, तब शकुंतला कहती है - "..अरे ये कौन पैरों में लगा बार-बार मेरा आँचल खिंच रहा है ? ... क्यों रोक रहा हैं छौने ? मैं तो यह घर छोडकर सदा के लिए जा रहीं हूँ... "[1] यह डायलॉग सुनते ही कनक की माँ की आँखों में आँसू झलक आते हैंऔर वह सिसकियाँ लेने लगती हैं । लडकी को वह पराया धन ही समझती है । उस वक्त कनक अपनी माँ को समझाती है कि यह नाटक के डायलॉग हैं जो कण्व ने बोले हैं । लेकिन उस वक्त उसकी माँ के अंदर की माँ जाग जाती है ओर वह कनक के सामने शादी का प्रस्ताव रखती है । उसके दो तीन सहेलियों के नाम लेकर उनके बच्चों की संख्या भी बताती हैं । साथ में दो-तीन लडकों के नाम बताकर इन में से किसी एक के बारे में सोचने के लिए कहती है । लेकिन कनक इन बातों से नाराज होकर माँ के इस प्रस्ताव को मानने के लिए इन्कार करती है । अपनी बेटी के इस जवाब से नाराज होकर वह कनक से कहती है - "राम जाने, तेरी खोयी अंगूठी लेकर मछुआ कब आयेगा ।"[2]

माँ इधर बेटी की जिंदगी को लेकर परेशान है और बेटी उधर अपने पूर्व प्रेमी नील को भूलकर कुमार से प्यार करने लगी है । कुमार एक दिन बीमारी का कारण बताकर ऑफिस से छुट्टी लेकर घर में आराम कर रहा था । तब प्यार में व्याकुल हिरणी कनक कुमार को ढूँढत- ढूँढते उसके कमरे में आ पहूँचती है । कुमार को अकेला पाकर वह खुश होती है । वहाँ शकुंतला और दुश्यंत के प्यार के बारे में चर्चा होती है । कुमार इस बात को समझाते समझाते गॉडफादर की कहानी बताता है । उसमें मायकेल और अपोलोनिया का पूर्वजीवन, उनका प्रथम मिलन, उसके बाद अपोलोनिया को देखने के बाद मायकेल की क्या स्थिति होती है आदि के बारे चर्चा होती है । उस वक्त अपोलोनिया ने उसकी आँखों की गहराई तनाव तथा लगाव आदि का देखा परखा और वह भी उसे प्यार करने लगी । इन बातों को वह समझाता है । यह सब बताते समय दोनों की दृष्टि एक दूसरे से बार-बार मिलती थी । दोनों की प्रेम संवेदनाएँ जाग उठी थीं । उसी समय कनक

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ -60*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ -61*

का दूपटा नीचे गिर जाता है । तब कुमार उसे उठाकर खुद बाँधने लगता है । बाँधते समय वह कनक का हाथ थाम लेता है । कनक भी उसके और पास आ जाती है । तब जैसे ... "(कुमार कनक की चिबुक पर उंगली रख उसका चेहरा ऊपर उठाता है ।)

कुमार : (स्वगत) यह कोमल अधर जिसने आज तक किसी तरह का दंश नहीं जाना अब हल्के - हल्के कांप कर मुझ प्यासे को रसपान की अनुमति दे रहे हैं ...
तुम्हारा उपकार इतना ही है कि तुमने मुझे अपना मुंह सूंघ लेने दिया ।
भौंरे को संतोष केवल कमल की सुगंध पाकर ही हो जाता है ।
(प्रगल्भ हो) और संतोष न हो, तो वह क्या करता है ?
(कुमार कनक को अपनी बाहों में ले लेता है । उसे चूमने को झुकता है । कनक की बाहें उसे घेर लेती हैं ।)" [1]

इस प्रकार इन दो प्यासे दिलों का मिलन लंबे आरसे के बाद हो जाता है । इनका प्यार बहुत फलने लगता है और अपनी सारी सीमाएँ तोड देता है । इन दोनों का प्यार, प्यार न रहके शारीरिक आवश्यकता-ओं का केंद्र बन जाता हैं । इसका नतीजा बहुत ही जल्द उनके सामने आता है । कनक कुमार से पेट से रहती है । इस बात का उसे आनंद भी होता है । इस हर्षभरी बात को वह कुमार के सामने स्पष्ट करती है । उसके मन में घर बसाने की इच्छा पैदा होती है । वह अपना एक बच्चा और पति के रूप में कुमार को देखकर आनंदित होती हैं और इसी कामना के साथ वह कुमार के सामने शादी का प्रस्ताव रखती है । कुमार उसे पुछता भी है कि तुझे क्या चाहिए ? तब कनक उसे और अपने बच्चे को चाहता हैं । शादी के बंधन से दूर रहकर स्वतंत्र एवं स्वच्छंदता से जीवन जीनेवाला कुमार कनक के इस प्रस्ताव को ठुकरा देता है । वह नहीं चाहता की बच्चे और शादी की जिम्मेदारी वह निभार्ये ।

अत: वह अलग विचार करके कनक को और उसके बच्चे को अपनाने से इन्कार कर देता हैं।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ -69*

कुमार का फैसला सुनकर कनक हताश हो जाती हैं। उसके मन में कुमार के प्रति तिरस्कार के भाव उमड आते हैं। उसके मन में बच्चे के प्रति लालसा थी। लेकिन ऐसे स्वार्थी, मनमौजी इन्सान के बच्चे को जन्म देना और उसे पालना वह पसंद नहीं करती। अत: वह उस गर्भ को गिरा देती है। इस तरह कनक कुमार को अपने और अपने बच्चे की जिम्मेदारी के बोझ से मुक्त कर देती हैं। कुमार को जब इस बात का पता चलता है, तब वह बहुत नाराज होता है और अपने आप को बहुत कोसने लगता है। इस घटना का उसे बहुत पश्चाताप होता है।

"कुमार : मुझे बताना तो चाहिए था। .. इसी बहाने सही, पर एक बार मैं फिर सोचता।

कनक : (दु:खभरी कडवाहट से) तुम्हें क्यों बताती मैं ? फिर से अपमान सहने के लिए?

कुमार : (आहत भाव से) तुम्हे सिर्फ अपना अपमान दिखायी देता हैं ?
मेरा दु:ख नहीं ?

कनक (विद्रुप से) तुम ... और दु:ख...

कुमार : तुम्हें नहीं पता, मुझपर क्या गुजर रही हैं। ...
जैसे दहकती सलाखें मेरे दिलो-दिमाग को दाग रही हैं ...।"[1]

इसी दरमियान सुदर्शन नामक व्यक्ति जो नाटक में एक कलाकार था कनक से प्यार करने लगता है। प्रस्तुत घटना के बाद सोच- समझकर सुदर्शन कनक के पास शादी का प्रस्ताव लेकर जाता है। शुरू शुरू में उदासी थकान और दु:ख के कारण कनक इस प्रस्ताव का इन्कार करती हैं। किंतु कुछ देर के बाद उसे अपनी स्वीकृति दे देती हैं। कुछ समय बाद कुमार के लिए अमरिका से एक पत्र आता है। उसमें कुमार को अमेरिकन थियेटर की स्टडी के लिए फैलोशिप मिल जाने की खबर मिलती है। कुछ दिनों बाद कुमार अमेरिका जाने के लिए एअर पोर्ट पर अपने मित्रों सहित आता हैं, उसमे सभी कलाकार थे और कनक भी थी। कुमार अपने मित्रों से विदाई ले रहा था उसी समय कनक कुमार से अपनी दी हुई अँगूठी की माँग करती है। जैसे -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अँगूठी पृष्ठ -113*

14050

"कुमार: अलविदा, दोस्तों ।

(हाथ हिलाता है ।)

कनक : मेरी अंगूठी ... ।" [1]

कुमार अंगूठी उतारकर कनक को देता है । कनक सुदर्शन के पास आती हैं । दोनों एक दूसरे की तरफ देखकर मुस्कान का आदान प्रदान करते हैं । सुदर्शन को कनक अंगूठी पहनाती है । इस तरह शकुंतला की खोयी हुई अंगूठी उसे वापस मिलती है । और सभी आनंद के साथ आठ का पहाडा बोलते अंधकार में समाते हैं । इसी समय नाटक समाप्त होता है ।

निष्कर्ष

'शकुंतला की अंगूठी' के कथ्य के संदर्भ में निष्कर्षत: कहा जाता है कि इसमें वर्तमान दुष्यंत और शकुंतला के चरित्रों को रेखांकित किया है । ऐतिहासिक कथानक के जरिए इसमें नाटककार ने आधुनिक कालीन युवक - युवतियों के बदलते प्रेम संबंधों को परिभाषित करने का प्रयास किया हैं । प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु को नाटककार नें चौदह दृश्यों में विभाजित किया हैं । नाटक में कुल चौदह पात्र है जिसमें नौ पुरुष और पाँच स्त्री पात्र हैं । प्रस्तुत नाटक का नायक कुमार है और नायिका के रूप में कनक है । छोटू, मैनेजर, रेखा, मंदाकिनी, सेठानी और माँ आदि गौण पात्र भी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं । नाटककार ने इन सभी के चरित्र चित्रण में काफी सफलता प्राप्त की हैं ।

प्रस्तुत नाटक के माध्यम से नाटककार ने नाटक के पात्रों के निजी जीवन का नाटक के कथ्य से संबंध दिखाने का प्रयास किया है । प्रस्तुत नाटक के माध्यम से नाटककार ने आज के गतिमान, हिंसक ओर तनावपूर्ण जीवन का चित्रण किया है । वर्तमान युग के दुश्यंत का बिगडा रूप समाज के सामने स्पष्ट करने का एक सफल प्रयत्न परिलक्षित होता है । रंगमंच की दृष्टि से यह नाटक एक सफल नाटक के रूप में सिद्ध होता है ।

: समन्वित निष्कर्ष :

हिंदी साहित्य में एक सशक्त नाटककार के रूप में विख्यात सुरेंद्र वर्मा सन 1972 में प्रकाशित अपने प्रथम नाटक 'सेतुबंध' के साथ नाटककार के रूप में पदार्पण करते हैं । सन 1972 से लेकर 1990 तक उन्होंने हिंदी नाट्य साहित्य को लगभग आठ नाटक देकर अपना महत्वपूर्ण योगदान किया हैं । उन्होंने अपने प्रत्येक नाटक में विषय वस्तु के स्तरपर प्रयोग धर्मिता को स्थान दिया हैं । ऐतिहासिक घटनाओं को आधुनिकता के साथ जोडकर नाटककार ने अपनी सृजनशीलता को प्रभावी बनाया है ।

नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने 'सेतुबंध' नाटक में मिथकीय प्रसंगों की अपेक्षा आधुनिक काल में स्थित पति-पत्नी के जीवन को, अलगाव को तथा तनाव को चित्रित किया है । प्रभावती के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि व्यक्ति को चेतना दमन का प्रतिकार नही कर सकती और अपराध बनकार घुटन का अनुभव करती है । प्रस्तुत रचनामें प्रभावती के चरित्र को प्रयोगशील बनाया हैं । इसके साथ ही नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में जातिवादी की दीवारों को तोडने का प्रयास किया है । प्रभावती ब्राह्मण जाति के प्रतिभाली कालिदास को चाहती है । परंतु उसके पिताजी चंद्रगुप्त उसकी शादी अटाव नरेश रूद्रसेन - क्षत्रिय राजा से करा कर उसके वैवाहिक जीवन पर घोर आघात करते हैं । नाटककार ने यहाँ प्रभावती के माध्यम से परंपरागत स्त्री स्वातंत्र्य को नये संस्कारों में ढालने का प्रयत्न किया हैं । प्रस्तुत नाटक वास्तव में वर्तमान जीवन का जीता - जागता चित्रण प्रस्तुत करता है ।

'द्रौपदी' नाटक के माध्यम से पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण और यांत्रिकता के कारण मानव जीवन की घुटन और तनावपूर्ण पारस्पारिक संबंध आदि को चित्रित किया है । प्रस्तुत नाटक में सुरेखा - मनमोहन पारिवारिक जीवन में दांपत्य जीवन की घुटन, पत्नी के प्रति पति के असंतुष्टता बच्चों की लापरवाही वृत्ति, उनका नैतिक अध:पतन, व्यसनाधीनता आदि बातों के द्वारा इस बिखरे परिवार का चित्रण किया गया है । इसके साथ ही नाटककार ने यथार्थ की भावभूमिपर आधारित आज के युवा-वर्ग की स्वच्छंद यौन संबंधों की भावनापर प्रकाश डाला है ।

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक की अवधारणा के पीछे सुरेंद्र वर्मा का एक महत् उद्देश्य दृष्टिगोचर होता है । प्रस्तुत नाटक में उन्होंने अस्त हुयी सामाजिक परंपराओं को नए

संस्कारों में ढालने का प्रयत्न किया है । नियोग-प्रथा इस का उदाहरण हैं । नपुंसकता के कारण नि:संतान स्त्री पुरुष बाह्य संबंध तलाश कर संतान प्राप्ति का प्रयत्न करते हैं । वास्तव में यह नियोग का ही नया रूप हैं । नाटककार ने पति की कुंठित यौन-आकांक्षाओं को नए सिरे से ढाला हैं । आदर्श भारतीय नारी मूल्यों को सर्वस्व माननेवाली शीलवती आर्य प्रतोष के संपर्क में आकर पूर्ण रूप में परिवर्तित होती हैं । जिसके जरिए पुराने मूल्यों की प्रतिष्ठापना नाटक की मूल्य आवधारणा के रूप में सामने आती हैं ।

'आठवाँ सर्ग' नाटक के माध्यम से नाटककार ने जाति - बिरादरी की सीमा रेखाओं को तोडकर चंद्रगुप्त की बेटी प्रियंगुमंजरी की शादी कालिदास से कराकर आधुनिक अंतरजातीय विवाह के साथ इस घटना का संबंध दिखाकर प्राचीनता में आधुनिक समाज की झलक प्रस्तुत की है । अर्थात प्रियंगुमंजरी एक राजकुमारी होने के साथ- साथ क्षत्रिय है और कालिदास एक कवि है । और जाति से ब्राह्मण । इसके साथ ही साथ नाटककार ने कालिदास के माध्यम से नए एवं आधुनिक साहित्यकारों की स्वतंत्र्यता, एवं अस्मिता जगाने के साथ साथ उन में आनेवालाी समस्या का समाधान भी प्रस्तुत किया है । अत: प्रस्तुत नाटक आधुनिक दृष्टि से एक विशिष्ट उपलब्धि है । जिसकी साहयता से लेखकीय स्वतंत्र्यता के पक्ष को उभारने का सफल प्रयत्न किया है ।

'शकुंतला की अंगूठी' नाटक के माध्यम से नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने नाटक के पात्रों के निजी जीवन का नाटक के कथ्य से संबंध दिखाने का प्रयास किया है । इसमें ऐतिहासिक कालीन समस्याओं को आधुनिकता के साँचे में ढाला गया हैं । इससे आज के गतिमान, हिंसक, तनावपूर्ण तथा अविश्वास भरे जीवन का स्पष्ट दर्शन होता है । इसके जरिए आधुनिक दुश्यंत का बिगडा हुआ रूप समाज के सामने लाने का प्रयास नाटककार ने किया है, जो शकुंतला से ही अंगूठी लेता है और अपने नाम से शकुंतला को ही पहनाता है । इससे वर्तमानकाल के विश्वासहीन तथा हिंसक युवकों का चित्रण नाटककार ने बडी सफलता से किया हैं ।

निष्कर्षत: स्पष्ट है कि सुरेंद्र वर्मा के प्रत्येक नाटक अलग अलग विषय को लेकर सामने आते हैं । संक्षेप में उन्होंनें एक मे नर-नारी संबंधों को उधृव ते किया है, तो दुसरे में जीवन मे भौतिक साधनों को

महत्वपूर्ण माननेवाले इन्सान को दर्शाया है । तीसरे में प्राचीन प्रथा एवं परंपराओं को स्पष्ट किया है, तो चौथे में नए साहित्यकारों की स्वतंत्र्यता तथा अस्मिता जगाने का प्रयास किया है । पाँचवे नाटक के अंतर्गत उन्होंने आज के युवा वर्ग की हिंसा की वृत्ति अविश्वासपूर्ण आदि के दर्शन होते हैं ।

इस प्रकार नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने प्रत्येक नाटक में अलग अलग विषयवस्तु को स्थान दिया है । इससे उनकी समकालीन जिंदगी की अनुभूति और नाट्य साहित्य के प्रति प्रयोगधर्मिता परिलक्षित होती है ।